Sem. 5, MJ-9

हिन्दी में मार्क्सवादी समीक्षा

हिन्दी समीक्षा जगत में बीसवीं शताब्दी का चौथा-पाँचवा दशक एक नयी पद्धति का लक्षण दिखाई पड़ा, जिसे मार्क्सवादी या प्रगतिवादी समीक्षा-पद्धति की संज्ञा दी गयी। विदेशी रूसी साहित्य से प्रभावित यह विचारधारा मुख्यतः कार्लमार्क्स के सामाजिक दर्शन से अनुप्राणित है। राजनीतिक वाद के रूप में मार्क्सवाद या साम्यवाद या समाजवाद मूलतः समाज के वर्ग-संघर्ष के आर्थिक कारणों के विभिन्न पक्षों से सम्बंधित है। मार्क्सवादी समीक्षा ने राजनीतिक सिद्धांतों - द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद, वर्ग संघर्ष, सर्वहारा वर्ग के प्रति समर्थन - को साहित्य-रचना के लिए मूल्यांकन का आधार बनाया। फलतः साहित्य को वर्गगत कठघरों में रखकर उसकी परीक्षा होने लगी। मार्क्सवादी समीक्षा वर्ण्य-विषय, शैली और भाषा को जनवादी बनाने का आकांक्षी है। यह मार्क्सवादी समीक्षा-दृष्टि अपने एकांगी दृष्टिकोण का शिकार हुआ और आगे चलकर इसे व्यक्तिवादी विचारधारा का विरोध सहना पड़ा। किन्तु इस विचारधारा का विस्तार न केवल काव्य-चिंतन तक सीमित रहा, बल्कि गद्य-साहित्य की सभी विधाओं ~~में इसका~~ तक ~~प्रसार~~ हुआ।

मार्क्सवादी समीक्षा-पद्धति साहित्य में आत्माभिव्यक्ति के सिद्धान्त को स्वीकार नहीं करती है और सामाजिक यथार्थ की अभिव्यक्ति को ही प्रगतिशीलता की कसौटी मानती है। डॉ० निर्मला जैन ने लिखा है, "मार्क्सवादी आलोचना का ऐतिहासिक महत्त्व इस बात में है कि उसके द्वारा 'कला कला के लिए' सिद्धान्त का विरोध और उन्मूलन हुआ। ..... कला, जीवन और समाज के बीच घनिष्ठ और स्वस्थ सम्बन्ध-भावना पहली बार इतने आग्रहपूर्वक सामने आयी। यही इस आलोचना पद्धति की सबसे बड़ी शक्ति है।"

हिन्दी समीक्षा के क्षेत्र में मार्क्सवादी दृष्टि को प्रतिष्ठित करने का श्रेय अनेक समीक्षकों को है। इन समीक्षकों में राहुल सांकृत्यायन ने इस विचारधारा को व्यापक भूमि प्रदान किया। अपने एक वक्तव्य में उन्होंने कहा था, कि "प्रगतिवाद कोई 'कल्ट' या संकीर्ण सम्प्रदाय नहीं।" मार्क्सवादी आन्दोलन के प्रबल समर्थक

प्रकाशचन्द्र गुप्त ने विचार किया कि यदि हमारे समाज में किसी प्रकार का वर्गगत अथवा अनर्थक संघर्ष है तो उसकी अभिव्यक्ति साहित्य में भी होनी चाहिए। गुप्तजी ने 'आधुनिक हिन्दी साहित्य: एक दृष्टि' जैसी पुस्तकों में अपने मत प्रकट किए हैं। 'प्रगतिशील साहित्य की समस्याएँ' पुस्तक तथा अनेक स्फुट निबंधों के द्वारा हिन्दी मार्क्सवादी समीक्षा के प्रमुख हस्ताक्षर डॉ० रामविलास शर्मा ने विचारधारा को पुष्ट किया तथा व्यावहारिक समीक्षाएँ भी प्रस्तुत की। कलात्मक मूल्यों के प्रति अवहेलना न दिखाते हुए डॉ० शर्मा ने लिखा, "यह आवश्यक नहीं कि शोषक वर्ग ने जिन नैतिक अथवा कलात्मक मूल्यों का निर्माण किया है, वे सभी शोषण-मुक्त वर्ग के लिए अनुपयोगी हों।" उनकी व्यावहारिक समीक्षा का रूप हमें उनकी पुस्तक – 'प्रेमचन्द और उनका युग', 'स्वाधीनता और राष्ट्रीय साहित्य', 'लोकजीवन और साहित्य' आदि में दिखता है।

मार्क्सवादी समीक्षा का एक बड़ा नाम शिवदान सिंह चौहान है। 'प्रगतिवाद', 'साहित्य की परख', 'आलोचना के मान' आदि पुस्तकों एवं अनेक निबंधों के द्वारा श्री चौहान ने हिन्दी में मार्क्सवादी समीक्षा को प्रतिष्ठित किया। साहित्यकारों को अपने कर्त्तव्यों के प्रति सचेत करते हुए शिवदानजी ने लिखा, "हमें प्रचार की चीजें नहीं लिखनी है, साहित्य लिखना है क्या? साहित्यकार की विशेषता यही है कि उसके अनुभूत की अभिव्यक्ति कलात्मक होती है .... फिर हमारे मन में प्रचार और साहित्य का प्रश्न उठकर द्वन्द्व क्यों मचाता है।"

'प्रगतिवाद की रूपरेखा' नामक निबंध-संग्रह के प्रणेता श्री मन्मथनाथ गुप्त मार्क्सवादी समीक्षा का एक अन्य नाम है। वे कलाकार की वैयक्तिक स्वतंत्रता वहीं तक स्वीकार करते हैं जहाँ तक वह जनता के विरुद्ध न जाय। प्रगतिवादी समीक्षा के संबंध में उनका विचार है, "यद्यपि प्रगतिवादी आलोचना किसी रचना के सामाजिक रुख से ही मुख्यत: सरोकार रखती है, फिर भी प्रगतिवादी लेखक भाषा आदि

के प्रति उदासीन नहीं रह सकता।" इसी तरह डॉ० रांगेय राघव ने अपनी पुस्तक 'प्रगतिशील साहित्य के मानदंड' में अपनी धारणा स्पष्ट की है। उनके विचार में "प्रगतिशील साहित्य शोषण का विरोध करता है। यह शोषण आर्थिक न होकर विविध रूपात्मक है।"

अन्य मार्क्सवादी समीक्षकों में रामेश्वर शर्मा, अमृत राय, नामवर सिंह आदि ने इस क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान किया है। नामवरजी ने 'प्रेमचंद और भारतीय समाज', 'कहानी : नयी कहानी', 'कविता के नए प्रतिमान' जैसे समीक्षा-ग्रन्थों में मार्क्सवादी समीक्षा को एक नयी ऊँचाई प्रदान की है। इस दृष्टि से मुक्तिबोध की प्रसिद्ध कविता - 'अंधेरे में' को वे 'अस्मिता की खोज' सिद्ध करते हैं। उन्होंने कहा, "मुक्तिबोध ने आत्मसंघर्ष के साथ-साथ वाह्य सामाजिक संघर्ष को भी स्वीकार किया है। आत्मसंघर्ष की परिणति अंततः सामाजिक संघर्ष में होती है।"

स्पष्ट रूप से हिन्दी में मार्क्सवादी समीक्षा ने साहित्य-सृजन के व्याकरण को नया आयाम दिया। इसने साहित्य को गम्भीर दायित्व माना। इन समीक्षकों ने साहित्य में मानव समाज के यथार्थ प्रतिबिम्ब पर बहुत बल दिया। किन्तु प्रायः सभी समीक्षकों ने विचारधारा की अपने-अपने स्वतंत्र दृष्टिकोण से भी इसकी व्याख्या की है।